सम्पादक की कलम से

प्रदूषण

प्र– प्रवृत्ति, दू– दूषित, ष– षड़यंत्र, ण– से कोई नया शब्द नहीं बनता है। ऐसा शब्द जिस शब्द के बाद लगता है उस शब्द के गुण को बड़ा देता है।

अशोक 'मानव'

प्रदूषण का पूर्ण अर्थ होता है प्रवृत्ति को दूषित करने का षड़यंत्र करना। जीव पदार्थ के स्वाभाविक विकास को प्रदूषण नहीं कहते हैं। स्वाभाविक विकास प्रकृति की प्रवृत्ति होती है। जो कभी प्रदूषण नहीं छोड़ती है। जीव पदार्थ के स्वाभावकि विकास में अवरोध उत्पन्न करने से प्रदूषण की उत्पत्ति होती है। उत्पत्ति प्रकृति का स्वभाव है। प्रकृति में खराब पदार्थ के प्रदूषण को खत्म करने के लिए जीव की उत्पत्ति होती है। मानव द्वारा या अन्य जीव जीव द्वारा छोड़ा गया पदार्थ प्रकृति निर्माण में सहयोगी होता है। ऐसे पदार्थ में नए जीवन की उत्पत्ति हो जाती है। जो पदार्थ के प्रदूषण को खत्म करके एक नए पदार्थ को छोड़ जाते हैं। इस प्रकार जीव द्वारा पदार्थ का विस्तार होता है और प्रदूषण खत्म हो जाता है। उदाहरण से इसे ज्यादा अच्छा जाना जा सकता है– यदि मानव सब्जी बनाता है तो उसका छिलका फेंकता है या अन्य खाद्य पदार्थ को खाता है और अखाद्य पदार्थ को फेंक देता है या शरीर में जिस पदार्थ की आवश्यकता नहीं रहती, वह बाहर निकल जाता है। ऐसे पदार्थ इकट्ठा होते रहते हैं। इनका रासायनिक परिवर्तन जहरीला(दुर्गन्धित) बनकर जीवन असंभव कर सकता है। पर ऐसा न हो इसलिए इस पदार्थ में नए जीवन की उत्पत्ति हो जाती है। ये जीव उस पदार्थ को खाकर अथवा शोधित कर मिट्टी में परिवर्तित कर देते हैं। ऐसा सूर्य प्रकाश पड़ने के कारण रासायनिक परिवर्तन से होता है। ऐसा होना प्रकृति का स्वाभाविक विकास होता है। इसमें किसका दोष सुनिश्चित किया जा सकता है– कूड़े का, कूड़ा फेंकने वाले का या सूर्य प्रकाश का। इसमें किसी का कोई दोष नहीं है। यही प्रकृति का निर्माण है इसी से प्रकृति का विस्तार होता है। उत्पत्ति प्रकृति की आवश्यकता होती है। इसमें मानव को जिसकी जरूरत है उसे अपने से जोड़ना चाहिए और जिसकी नहीं उससे दूर रहना चाहिए न कि उसे नष्ट कर देने का भाव या उसे नष्ट कर देना चाहिए। जो मेरी आवश्यकता नहीं वह प्रकृति की आवश्यकता है। एक से नहीं सभी के मिलन से प्रकृति का संचालन हो रहा है। मानव जब प्रकृति के अन्य जीव, पेड़–पौधे, पदार्थ को अनावश्यक नहीं करती है। प्रकृति द्वारा जीव पदार्थ की उत्पत्ति अवगुण को खत्म कर गुण में परिवर्तित करने की वैज्ञानिक विधा है। इस विधा में व्यवधान उत्पन्न करना ही प्रदूषण है।

प्रकृति जीव उत्पत्ति से अपना विस्तार करती है। जीव जीवन रहते हुए ढेर सारे पदार्थ छोड़ता है। ये पदार्थ प्रकृति में रासायनिक परिवर्तन के बाद परिपक्व पदार्थ का निर्माण करते हैं। जीव जब स्वाभाविक रूप से शरीर छोड़कर जाता है तो उससे भी परिपक्व पदार्थ का निर्माण होता है। व्यक्ति द्वारा जब पेड़–पौधे, फल–फूल या अन्य कोई जीव को परिपक्व होने से पूर्व प्रकृति से अलग कर देने के कारण जिस पदार्थ के निर्माण के लिए पैदा होता है उसे नहीं बना पाता है। जिसके परिणामस्वरूप प्रदूषण पैदा होन लगता है। प्रकृति पौधों की उत्पत्ति स्वयं करती रहती है, उन्हें यदि न काटा जाए तो प्रदूषण नहीं उत्पन्न होगा। फूल या फल जो सुगंध और भोजन का कार्य करते हैं जब इनका कार्य पूरा हो जाता है तो यह स्वतः वृक्ष से अलग हो जाते हैं। यही इनकी परिपक्व अवस्था होती है। इस प्रकियरा के पूरा होने के बाद ये परिपक्व पदार्थ का निर्माण करते हैं। यदि इससे पूर्व इन्हें तोड़ दिया जाता है तो जहां इन्हें हीरा बनना रहता है वहां ये कोयला बनकर रह जाते हैं। इस व्यवधान से प्रदूषण उत्पन्न होता है। जिससे अप्राकृतिक घटनाएं होने लगती हैं। जिसके कारण से जीवन में व्यवधान उत्पन्न होने लगता है। इस वैज्ञानिकता को लोग पहचानेंगे नहीं तो जीवन असंभव भी हो सकता है, बीमारियां फैल सकती हैं। मानव विकासशील प्राणी है, प्रकृति को न छेड़ते हुए विकास करे तो ज्यादा अच्छा है। यदि भूल वश कोई टूट जाता है या कट जाता है तो उसकी जगह दूसरा पौधा लगा दें। प्रकृति जीव के स्वाभाविक विकास में जो व्यवधान उत्पन्न किया जाता है, उससे उत्पन्न होने वाला प्रदूषण पूरे जगत को प्रभावित करता है। पर एक ऐसा प्रदूषण होता है जो मानव द्वारा उत्पन्न होता है और मानव जीवन को ही प्रभावित करता है। इस प्रदूषण का नाम है **"भावनात्मक प्रदूषण"**।

विचार से भावना पैदा होती है। अच्छी भावना मानव सुगंध होती है जो पूरी प्रकृति को महकाती है। खराब भाव से भावनात्मक प्रदूषण पैदा होता है। यह प्रदूषण श्वसन किया के माध्यम से मानव शरीर के अंदर जाता है। इस प्रदूषण से मानव में बीमारी पैदा होती है। आज मानव जीवन में असंख्य बीमारियां पैदा हो गई हैं यह भावनात्मक प्रदूषण का परिणाम ही तो है। जरा सोचिए अन्य जीवों में इतनी बीमारियां नहीं है। कुछ सीजनल बीमारियां होती हैं और ये भी पालतू जानवरों मतें भी ज्यादा पायी जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जानवर भावनात्मक प्रदूषण नहीं छोड़ते हैं। इसलिए प्रकृति इन्हें प्रदूषण से प्रभावित नहीं होने देती। मानव जीवन से आग्रह है कि भावनात्मक प्रदूषण न छोड़कर मानव समाज को बीमारी मुक्त बनाने में सहयोग करें। और खुद निरोगित रहकर जीवन का आनंद लें। बुरा सोचने से खाये हुए पदार्थ से शरीर के अंदर जिस पदार्थ का निर्माण होता है वह दूसरे की बुरी सोच के लिए प्राकृतिक वातावरण का कार्य करता है जिससे रोग उत्पन्न करने वाले बैक्टीरिया जत्म लेते हैं। यदि भावनात्मक प्रदूषण न छोड़ा जाए तो शरीर के अंदर बीमारी वाले बैक्टीरिया नहीं पैदा हो पाएंगे। भावनात्मक प्रदूषण न छोड़कर प्रकृति को दुर्गंधित होने से बचाए और खुद भी सुरक्षित रहे।